International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

प्राचीन वैदिक साहित्य मे पर्यावरणी उल्लेख का ऐतिहासिक विश्लेषण

शोधार्थी – पारस अग्रवाल

समाज विज्ञान अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय इंदौर

सारांश –

भारतीय ज्ञान परंपरा में पर्यावरण को एक अभिन्न अंग माना गया है, जिसमें प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण और नैतिक संबंध पर जोर दिया गया है। यह आधुनिक भौतिकवादी दृष्टिकोण के विपरीत है, जो प्रकृति को केवल उपभोग की वस्तु मानता है। इस परंपरा में पर्यावरण को जीवंत माना जाता है, जहाँ मनुष्य एक जटिल पारिस्थितिकी तंत्र का हिस्सा है, न कि उसका मालिक। भारतीय ग्रंथों में प्रकृति के साथ एक संतुलित जीवन जीने की शिक्षा दी गई है। प्रकृति का दोहन केवल आवश्यकतानुसार करने का सुझाव है, न कि लालचवश, क्योंकि अत्यधिक उपभोग असंतुलन पैदा कर सकता है। प्राचीन भारतीय ज्ञान, जैसे कि वेद और उपनिषद, बताते हैं कि सृष्टि पाँच पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाशे बनी है। इन तत्वों में से किसी एक में भी प्रदूषण या असंतुलन होने पर उसका नकारात्मक प्रभाव मानव जीवन पर पड़ता है। पवित्रता और दिव्यताः भारतीय दर्शन में, प्रकृति को पवित्र और दिव्य माना गया है। भारतीय संस्कृति में पेड़ों और जानवरों को विशेष महत्व दिया जाता है। पीपल, वटवृक्ष, नीम और तुलसी जैसे वृक्षों को पवित्र माना जाता है, जो वैज्ञानिक दृष्टि से भी लाभकारी हैं। विभिन्न जीव–जंतुओं के प्रति भी सह–अस्तित्व और प्रेम का भाव रहा है। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः' जैसे मंत्र सभी के कल्याण की कामना करते हैं, जिसके लिए प्रदूषण रहित और शुद्ध पर्यावरण आवश्यक है। आज के दौर में जब दुनिया जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय संकटों से जूझ रही है, भारतीय ज्ञान परंपरा के ये सिद्धांत महत्वपूर्ण मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। टिकाऊ जीवनशैली, प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग और प्रकृति के प्रति सम्मान जैसे विचार आधुनिक पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान करने में सहायक हो सकते हैं।

मूलशब्द :– पर्यावरण, आवरण, संरक्षण, प्रकृति, प्राकृतिक, मानव

➢ भूमिका

वैदिक साहित्य में पर्यावरण के संबंध में कई महत्वपूर्ण संदर्भ और अवधारणाएं मिलती हैं, जो प्रकृति के संरक्षण और मानव के साथ उसके सामंजस्यपूर्ण संबंध पर जोर देती हैं।

वैदिक ऋषियों ने पर्यावरण को पंचतत्वों (**पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश**) का एक जटिल तंत्र माना और इसके प्रत्येक घटक का सम्मान करने का उपदेश दिया।

- **पृथ्वी (भूमि)**

वैदिक साहित्य में पृथ्वी को माता के रूप में पूजनीय माना गया है। अथर्ववेद का पृथ्वी सूक्तः यह सूक्त पृथ्वी के प्रति गहन सम्मान व्यक्त करता है। इसका एक प्रसिद्ध मंत्र कहता है, **"माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः"** (भूमि मेरी माता है और मैं उसका पु हूँ), जो पृथ्वी के साथ मानवीय संबंध को स्थापित करता है। अथर्ववेद (12-1-35)[1]: इस मंत्र में कहा गया है कि जिस भूमि में समुद्र, नदियाँ और कृषि योग्य भूमि है, वह हमें श्रेष्ठ पेय पदार्थ दे।

- **जल (आपः)**

जल को जीवन का आधार और पवित्र माना गया है। ऋग्वेद (10-9-3)[2]: जल की स्तुति करते हुए इसे औषधि के समान बताया गया है, जो जीवन, बल और कांति प्रदान करता है। अथर्ववेद (6-24): जल चिकित्सा का वर्णन करते हुए, यह मंत्र जलधाराओं की प्रशंसा करता है जो हिमालय से बहकर समुद्र में मिलती हैं और हृदय की जलन का उपचार करती हैं।

- **वायु (वात)**

वायु को जीवनदायिनी और आरोग्यकारी माना गया है। ऋग्वेद (1-90-6–8):[3] इस मंत्र में वायु को आनंददायक कहा गया हैः **"मधु वातः ऋतयते मधु क्षरन्ति सिंधवः"**। इसका अर्थ है कि हवा जीवन को आनंद से भर देती है। ऋग्वेद में 'विश्वभेशज': ऋग्वेद में वायु के लिए 'विश्वभेशज' (सभी रोगों की औषधि) शब्द का प्रयोग किया गया है, जो इसकी शुद्धता के महत्व को दर्शाता है।

- **अग्नि (तेज)**

अग्नि को पवित्रता का प्रतीक और प्रदूषण निवारक माना गया है। यज्ञः वैदिक संस्कृति में यज्ञ का बहुत महत्व है। यज्ञ के धुएँ में जड़ी–बूटियाँ होती थीं, जो वायु को शुद्ध करती थीं। यज्ञ के माध्यम से वातावरण को संतुलित और प्रदूषण मुक्त रखने का प्रयास किया जाता था। यजुर्वेदः इसमें कहा गया है कि यज्ञ पृथ्वी, अंतरिक्ष और अन्य लोकों के प्रदूषण को दूर करता है।

- **वनस्पति और जीव–जंतु**

वनस्पतियों और जीवों को प्रकृति का अभिन्न अंग माना गया है। सतत विकास का विचारः वैदिक काल में प्रकृति का दोहन केवल आवश्यकतानुसार करने की बात कही गई है, न कि अत्यधिक उपभोग करने की, ताकि पर्यावरण का संतुलन बना रहे। वृक्षारोपण का महत्वः वैदिक साहित्य में वृक्षों के महत्व पर भी जोर दिया गया है, क्योंकि ये पर्यावरण के शोधक हैं। पशु–पक्षीः इन्हें पर्यावरण का महत्वपूर्ण हिस्सा माना गया है, जिनकी सुरक्षा और संरक्षण की बात कही गई है।

- **शांति और संतुलन**

वैदिक ऋषि शांति और संतुलन पर भी जोर देते हैं। शांति मंत्रः विभिन्न शांति मंत्रों में प्रकृति के विभिन्न घटकों (जैसे अंतरिक्ष, पृथ्वी, जल, औषधि और वनस्पति) में शांति बनाए रखने की प्रार्थना की गई है। सामंजस्यपूर्ण संबंधः वैदिक साहित्य मानव और प्रकृति के बीच एक सामंजस्यपूर्ण और सहयोगी संबंध स्थापित करने का संदेश देता है।

पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ है 'चारों ओर से वरण अथवा आवरण अथवा अधिकार अथवा भरण करना। प्राकृतिक तत्वों यथा वायु, जल, वर्षा, भूमि, नदी, पर्वत इत्यादि से संपूर्ण जैवमंडल का सुरक्षा कवच प्रकृति ने हमें दिया है किन्तु हम प्रकृति से प्राप्त संरक्षण और सुरक्षा को नष्ट करने में लगे हैं। मनुष्य प्रकृति के अनियंत्रित दोहन में लगा हुआ है। हमारे प्राचीन वाङ्मय में प्रकृति का संतुलन बनाए रखने के लिए बारबार आह्वान मिलता है–मनुष्य अपनी इच्छाओं को वश में रखकर प्रकृति से उतना ही ग्रहण

करे कि उसकी पूर्णता को क्षति न पहुंचे। पर्यावरण के तीन मूलभूत कारक मृदा, वायु तथा अग्नि को वेदों में पृथ्वीलोक, में चित्रित किया गया है जो सर्वव्यापक शक्ति अर्थात् अन्तरिक्षलोक तथा द्युलोक अथवा आदित्य लोक के रूप विष्णु द्वारा रचित तथा संरक्षित है। बलि से दान में विष्णु ने तीन कदम में तीनों लोकों का अधिग्रहण कर लिया था जो वास्तव में इनके संरक्षण का ही प्रतीक है। वेदों में कहा गया है कि हम जाने–अनजाने ऐसा कुछ न करें जो विध्वंसक हो यदि कोई ऐसा कार्य हमसे हो जाए, जो सृष्टि के संरक्षण के प्रतिकूल हो, तो द्यावा पृथ्वी हमारी रक्षा करें।[4]

ऋग्वेद में पर्यावरण के परिप्रेक्ष्य में बहुत सी जगह आशंका या भय व्यक्त किया गया है जिससे यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि वेदों के रचयिता को मानव जाति से पर्यावरण को खतरे और 'अभ्यात् जैसे पद इसी आशंका को दर्शाते हैं और की आशंका बराबर बनी हुई थी। इसमें प्रयुक्त दूरितात इसमें किसी अज्ञात पाप से रक्षा का आह्वान भी है। वस्तुतः यह मानव द्वारा पृथ्वी के प्रति अपने दायित्वों के निर्वहन की अवहेलना से उद्भूत पाप है, जो कदापि क्षम्य नहीं है और इसमें मानव के कृत्यों से पर्यावरण की रक्षा की याचना की प्रतीति होती है।

➢ उद्देश्य

- इस पत्र के द्वारा पर्यावरण महत्व को ज्ञात करने का प्रयास किया जाएगा।
- इसमें प्राचीन वैदिक साहित्य पर्यावरण के विश्लेषण का उल्लेख किया जाएगा।
- इस शोध पत्र के द्वारा प्राचीन पर्यावरणीय व्यवस्था को साहित्य के माध्यम से देखा देखना है।

➢ विषय वस्तु

देवी–देवताओं की भूमि भारत अपने धर्म, साहित्य, संस्कृति और परम्परायें, वनस्पति, जल, पर्वत, नदियों एवं पशु–पक्षी एवं मानव में सम्बन्धों की अपनी आस्थाओं को इस प्रकार समाहित किये हैं कि हम पत्थर, पशु, पेड़, जल से लेकर मनुष्य, धरती व आकाश सभी को हमारे तन–मन व आचरण में एकात्म पाते हैं। भारत की धरती मात्र भू–भाग नहीं है, यह पुण्य जगत् जननी है। पेड, पशु, पक्षी, पर्वत, नदियां, जल व मानव प्रत्येक इसी की कोख से जन्म लेता हैं। जिन्हें मिलाकर हमारा भूमण्डलीय समाज बना है, इस दर्शन की गहराई को सोचें तो लगता है कि हम पेड़ नहीं काटते–एक भाई की हत्या करते हैं। हम नदी को प्रदूषित नहीं करते वरन् अपनी बहन को जहर देकर हत्या करने पर तुले हैंए हम अवैध खनन नहीं कर रहे हैं। हम हमारी जननी वसुन्धरा के सीने को छलनी कर रहे हैं। हमारी इन्हीं

स्वार्थी हरकतों ने हमारी आकाशीय सुरक्षा के कवच ओजोन की परत में छेद कर विनाश की बाढ़ का रास्ता तैयार कर दिया है और अपनी संतानों को इस तरह मरते देख धरती कराह रही है कि उसका एक स्वार्थी बेटा मनुष्य सर्वनाश का रास्ता तैयार कर रहा है।[5]

वायुमण्डल में प्रदूषण और प्रकृति के असंतुलन के कारण वर्तमान काल में ऋतुचक्र बहुत कुछ बदल गया है तथा अनिश्चित हो गया है। कहीं अतिवृष्टि होती हैं, कहीं अल्पवृष्टि, तो कहीं अनावृष्टि। कहीं इतना हिमपात होता है कि जन–जीवन अस्त–व्यस्त हो जाता है। कहीं सूखा पड़ जाता है तो कहीं आती है बाढ़। ये सब प्राकृतिक विपतियां मनुष्य निर्मित हैं क्योंकि स्वयं मानव ने ही प्रकृति के संतुलन को बिगाड़ा है। प्रकृति के असंतुलन ने ही ऋतुचक्र को बदला है जिससे जनसामान्य का जीवन भी प्रभावित हुआ है। फेफड़ों, कैंसर व हृदयरोगों एवं मानसिकतनाव का मुख्य कारण भी यही असंतुलन है। हम सभी जानते हैं कि धरती पर जीवन प्रकृति संतुलन से ही संभव हो सका है। पहले प्रकृति के विभिन्न तत्वों में संतुलन था। धरती वनस्पतियों से पूरी तरह ढक न जाय इसलिए घास खाने वाले जानवर पर्याप्त संख्या में थे और इन जानवरों की संख्या अधिक न बढ़ जाय इसलिए हिंस्र जन्तु भी थे। इन तीनों का अनुपात संतुलित और नियंत्रित था। जनसंख्या का विस्फोट नहीं हुआ था। इसलिए धरती पर्याप्त फल–फूलादि से परिपूर्ण थीं पर आज औद्योगिक विकास, वैज्ञानिक आविष्कारों तथा बढ़ती हुई जनसंख्या ने प्रकृति के संतुलन को गड़बड़कर रख दिया है। बढ़ती हुई आबादी को खिलाने के लिए उसकी मात्रा में अन्न, सब्जी, फल आदि चाहिए। रहने के लिए घर, पहनने के लिए कपड़े तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विविध प्रकार की सामग्री चाहिए। इसलिए वनों का हास होता गया। धरती के अनेक हरे–भरे आँचल जो प्राकृतिक सुषमा से भरपूर थे अब बंजर बनकर रह गये हैं। खेतों में डाले गये उर्वरक एवं कीटनाशी दवाइयां मिट्टी को दूषित करती हैं। बढ़ती हुई आबादी गंदगी भी कम नहीं फैलाती और यह गंदगी नदियों जलाशयों को दूषित करती है। बड़े–बड़े कल–कारखानों के धुएं से प्रदूषित होती है वायु तथा तेज चलने वाले वाहन भीषण शोर करते है। हृदय की धडकनों को तेज करने वाला शोर मानसिक तनाव बढाता है हृदयरोगों को जन्म देता है।

नैसर्गिक प्रक्रियाएं आकाश, पृथ्वी, वायु, जल तथा ध्वनि संबंधी प्रदूषण को कम करती हैं तथा पर्यावरण को शुद्ध करती हैं परंतु आज प्रदूषण इस सीमा तक पहुंच गया है कि नैसर्गिक शक्तियां पर्यावरण को पूर्ण रूप से शुद्ध करने में असमर्थ हो रही हैं। इसीलिए विश्वभर के वैज्ञानिक चिंतित हैं तथा पर्यावरण को प्रदूषण से बचाने के उपाय खोजने में लगे हैं। संस्कृत साहित्य में प्रारंभ से ही प्रकृ ति के इन तत्वों के संरक्षण के लिए प्रयत्न किया गया है। विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद से प्रारंभ

करें तो हम देखते हैं कि वैदिक ऋषि प्रकृति की भिन्न–भिन्न शक्तियों को ही विभिन्न देवताओं के नामों से सम्बोधित कर सुन्दर–सुन्दर स्तुतियों से उनकी उपासना किये हैं। ऋग्वेद ही क्यों संपूर्ण वैदिक साहित्य प्रकृति के भिन्न–भिन्न रूपों का गुणगान ही प्रतीत होता है। प्रकृति के ये नानाविध रूप विभिन्न देवताओं के रूप में उभरते हैं। इन देवताओं का लीलाक्षेत्र पृथ्वी, अन्तरिक्ष तथा द्युलोक में बंटा है। यद्यपि वैदिक काल में सृष्टि साम्यावस्था में थी, पर्यावरण प्रदूषण की समस्या नहीं थी परंतु मानव स्वभाव को जानने वाले ऋषियों ने वैदिक वाङ्मय में जीवन की इस प्रकार से व्याख्या की जिससे पर्यावरण की समस्या उत्पन्न ही न हो और यदि कहीं समस्या उत्पन्न भी हो तो उसके समाधान जुटाने का प्रयत्न वैदिक ऋषि द्वारा किया गया है।

➢ शोध का मूल्यांकन

वैदिक ऋषि की यह सजगता और जागरूकता वैदिक साहित्य में पदे पदे परिलक्षित होती है। यही कारण है कि वैदिक ऋषि संपूर्ण पृथ्वी को अपनी माता के रूप में उद्घोषित करता हुआ कहता है–

माता भूमिः पुत्रो अहम् पृथिव्याः।

➢ वैदिक साहित्य मे वनस्पति संरक्षण :–

वृक्षों की मानव समाज को बहुत बडी देन है वृक्ष जीवन के लिये वर्षा को आमंत्रित करते है। वे कार्बनडाईआक्साईड लेते और आक्सीजन छोडते है। नगरों के मध्य पेड–पौधों को नगरों के फेफड़े कहा जाता है। लिपि बद्ध करने हेतु भोज पत्र व कागज के लिये लकड़ी भी वृक्षों से ही मिलती है। अपने गुणों के कारण हमारे देश में वृक्षों की पूजा की जाती रही है। मानव और पर्यावरण ग्रंथ में वनस्पति के विकास क्रम और उसकी कम होती हुई संख्या पर चिन्ता प्रकट की गई है। इसी ग्रंथ में कहा गया है कि प्रकृति ने सबसे अधिक वनस्पति को उत्पन्न किया, दूसरे क्रम में मासांहारी तथा तीसरे क्रम में मनुष्य को लेकिन वर्तमान में मनुष्य सबसे अधिक और वनस्पति सबसे कम रह गई है, जो जनसंख्या बढ़ने का परिणाम है। वैदिक ग्रंथों में वर्णित वृक्ष वनस्पति सरंक्षण के प्रति वर्तमान दौर में लगाव की अभिवृति विकसित करने की जरूरत है।

पर्यावरण वैज्ञानिकों के अनुसार वृक्ष एवं वनस्पतियां पर्यावरण की सुरक्षा के लिये सर्वाधिक उपयोगी है जो कि जीवनदायक एवं स्वास्थ्यप्रद वायु ऑक्सीजन छोड़ते है तथा जीवन के लिये हानिकारक वायु को अपने में ग्रहण कर लेते है। वृक्षों के इस महत्त्व को .ष्टिगत रखते हुए ही वेदमन्त्रों में वृक्षों, वनस्पतियों, औषधियों एवं यनों तथा वनों के रक्षकों तक को नमस्कार किया गया है और इनके मधुमय

हितकारी एवं शान्तिदायक होने की कामनाएं की गयी है। यजुर्वेद और ऋग्वेद में औषधी और वृक्ष–वनस्पति विषयक विवरण मिलते हैं। जिनमें –'नमो वृक्षेभ्यः', 'नमो वन्याय च वनानां पतये नमः', 'औषधीनाम् पतये नमः', 'मधुमान्नो वनस्पतिः', 'औषधयः शान्ति वनस्पतयः शान्ति ।

यहां यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि वैदिक एवं लौकिक संस्कृत साहित्य में वृक्ष, वनस्पति, वीरुध एवं औषधि प्रायः एक ही अर्थों में प्रयुक्त हुए हैं। मन्त्रद्रष्टा ऋषि इस तथ्य को भली–भांति जानते थे कि वृक्ष एवं लताएं जहां अपने फल फूल एवं काष्ठ आदि द्वारा समृद्धि प्रदान करते हैं, वहां वे शुद्ध वायु द्वारा पर्यावरण को माधुर्यमय तथा प्राणवान् भी बनाते हैं। ऋग्वेद का अरण्यानी सूक्त पर्यावरण के महत्त्व की से वैदिक काल का राष्ट्रीय काव्य कहलाने का अधिकारी है। ऋग्वेद में अरण्यानीको देवता के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यर्जुवेद में वनानां पतये नमः कहा गया है, इसी प्रकार ''या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा '' कहकर ऋषियों ने वनों और औषधियों को मानव कल्याण की से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्वीकार किया है और उसे देवताओं से प्राचीन प्रतिष्ठित किया है।

ऋग्वेद में कहा गया है कि औषधि का आवहान करने वाला व्यक्ति अथवा मुनि या रोगी, औषधि से रोग दूर करने के लिए और पति स्वरूप सुख को प्राप्त करने के लिए आवाहन करता है. यह ऊपर की ओर फैलने वाली गुणकारक तथा रोग नाशक औषधि है।

अथर्ववेद में कहा गया है कि दिव्य गुण वाली, शक्तिवर्द्धक और मानव को जीवन देने वाली बेल–बूटियों को देवता की भांति आदर देते हुए आह्वान किया जाता है, इसलिए इन जड़ी–बूटियों की रक्षा की जानी चाहिए, उखाड़ कर खरपतवार की तरह व्यर्थ नहीं फेकना चाहिए। अथर्ववेद के एक मन्त्र में अश्वत्थ (पीपल) कुश, कांस (दर्भ), सोमलता, चावल और जौ के गुणों को जानने की प्रेरणा दी गई है।[6]

अथर्ववेद में ही कहा गया है कि जिस प्रकार माता बालक को दूध पिलाकर बड़ा करती है वैसे ही ये वनस्पतियां भी मानव कल्याण के लिए दूध देती है। अर्थात रस प्रदान करके रोगों का निदान करती है। अथर्ववेद में वानस्पतिक औषधियों को वायु के प्रचण्ड तूफान की तरह माना गया है जो रोग को वृक्ष की तरह उखाड़ कर फेंक देती है। वैदिक साहित्य में पीपल, तुलसी और अशोक वृक्ष के महत्त्व पर काफी बल दिया गया है। वैदिक वाङ्मय में ब्राह्मण वर्ग को ही पीपल की समिधा से हवन करने का अधिकार प्राप्त था, अन्य किसी को नहीं, इस धार्मिक .ष्टिकोण के कारण पीपल वृक्ष की रक्षा होती है। संस्कृत वाङ्मय में कहा गया है कि पीपल गायत्री मंत्र के उच्चारण के साथ और आक की समिधाओं से हवन करने पर विजय प्राप्त होती है।

➢ **वैदिक साहित्य मे वृक्ष संरक्षण**

पर्यावरण के संतुलन में वृक्षों के महान योगदान एवम् भूमिका को स्वीकार करते हुए मुनियों ने वृहत् चिंतन किया है। मत्स्य पुराण में उनके महत्व को स्वीकार करते हुए कहा गया है कि दस कुओं के बराबर एक बाड़ी होती है, दस बावडियों के बराबर एक तालाब, दस तालाबों के बराबर एक पुत्र और दस पुत्रे के बराबर एक वृक्ष होता है।

दश कूप समा वापी, दशवापी समोहद्रः ।

दशह्रद समः पुत्रे, दश पुत्रे समो द्रुमः ।।[7]

अतः हमें वृक्षों को संरक्षित करने के साथ–साथ अधिकाधिक वृक्षों का रोपण भी करना चाहिए।

➢ **वैदिक साहित्य मे वायु संरक्षण–**

शुद्ध वायु जीवन की आधार शिला है। ऋग्वेद में वायु को विश्व भेषज अर्थात् सबका चिकित्सक कहा गया है तथा यह कामना की गई है कि सर्वत्र शुद्ध वायु प्रवाहित हो

आ बात वाहि भेषजं वि बात वाहि यद्रपः।

त्वं हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयसे।।''[8]

वायु को अशुद्धि से बचाने के लिए वैदिक काल में यज्ञ विधि को अपनाया गया था। वायु को शुद्ध एवं गुणकारी बनाने के लिए जो अणु–भेदक शक्ति यज्ञाग्नि में है वह अन्यत्र नहीं।'' यज्ञ को वेदों में आकाश और पृथ्वी दोनों को पवित्र करने वाला बताया गया है तथा यज्ञ कर्म में प्रवृत होने की प्रेरणा दी गयी है।

➢ **वैदिक साहित्य मे जीव जन्तु संरक्षण :–**

वेदों में पशु हिंसा का केवल निषेध ही नहीं किया गया बल्कि मनुष्यों को पशु एवं उनके जीवन की रक्षा के लिए प्रयत्नशील रहने का सकारात्मक निर्देश भी दिया गया है। अथर्ववेद में कहा गया है कि ''द्विपाद'' (दो पैर वाले) और ''चतुष्पाद'' (चार पैर वाले) जीवों की हत्या न करों। इसी वेद में कहा गया है कि गाय, घोडे और मनुष्य की हत्या न करों। यजुर्वेद में पशुओं का नाम लेते हुए कहा गया है कि गाय, गवय (नील गाय), द्विपाद पशु, एक शफ वाले पशु, चतुष्पाद पशु, ऊँट और भेड़ आदि को न मारों। यजुर्वेद में घोड़े की हत्या को दण्डनीय अपराध बताया गया है। वेदों में गाय का बहुत महत्त्व बताया गया है, और उसमें सभी देवों का निवास बताया गया है। ऋग्वेद में गाय को इन्द्र की प्रतिनिधि बतातें हुए उसे सोम का पहला घूंट कहा गया है। ऋग्वेद के एक अन्य मंत्र में गायों से कल्याण की बात कहीं गई है। ऋग्वेद के छठे मण्डल में भारद्वाज ऋषि ने 28वें सुक्त में गौ की स्तुति की है। इसी तरह

दसवें मण्डल के 19वें सुक्त का देवता गौ है। पवित्रता और लगाव की .ष्टि से ऋग्वैदिक ऋषियों के मन में जो स्थान गाय को प्राप्त था यो अन्य किसी पशु को प्राप्त नहीं था ऋग्वेद के छठे मण्डल में भारद्वाज ऋषि ने गाय की महत्ता और पवित्रता पर जानकारी दी है।[9]

वैदिक व्यवस्थाकार पशु पक्षी और वन्य प्राणियों के संरक्षण की बात पर्यावरण संवर्धन की जागरूकता पैदा करने के लिए करता है, साथ–साथ इनकी मानव जीवन के लिए उपयोगिता के परिप्रेक्ष्य में उल्लेख करता है। वृक्ष–वनस्पति, गाय के दूध, औषधि आदि की प्रशंसा करने वाले सैकड़ो सूक्त वेदों में मिलते हैं।

ऋग्वेद के प्रणेता ऋषि मानव और मानवेत्तर जीव जन्तुओं के साथ ही वनस्पति, पेड़–पौधों में भी उसी एक सत्ता के विविध रूपों को देखते हैं। विश्वामित्र ने ऋग्वेद के सप्तम मंडल में देवताओं के साथ औषधियों और वृक्षों के लिए भी स्तोत्र कहे हैं कि ''इन्द्र, वरूण, मित्र, अग्नि, जल औषधियां और वृक्ष हमारे इस स्तोत्र को सुने, मरूतों के पास रहकर हम सुख से रहेगे, तुम सदा हमारी रक्षा करों।[10]

- **वैदिक साहित्य में भूमि संरक्षण–**

समस्त प्राणी जगत का आधार एवं आश्रय स्थल पृथ्वी ही है। अतः वेदों में भूमि को माता के समान वन्दनीय माना गया है। भूमि औषधियों को उत्पन्न करने वाली, वनस्पतियों व शस्य सम्पदा को धारण करने वाली. बहुमूल्य धातुओं की खान है। अतः उसे सर्वविध संरक्षित करना चाहिए।[11]

अथर्ववेद में वर्णित है कि पृथ्वी के जिस भाग को खोदा गया हो उसे तुरन्त भर देना चाहिए। पृथ्वी के हृदय व मर्मस्थल को कभी क्षति मत पहुँचाओ–

यत् ते भूमि विखनापि क्षिप्रं तदपि रोहतु।
मा ते मर्म विमृग्वरि मा ते हृदयमर्पिपम्।।''[12]

पर्यावरण की .ष्टि से भूमि की उपयोगिता को स्वीकारते हुए यजुर्वेद में पृथ्वी का अनावश्यक दोहन न करने का निर्देश दिया गया है–

पृथिवी द्वंह पृथिवि मा हिंसी।''[13]

➢ वैदिक साहित्य मे जल संरक्षण

प्राचीन भारतीय संस्कृति में जल को जीवन माना गया है–जलमेव जीवन। हमारे वैदिक साहित्य में जल के स्रोतों, जल का समस्त प्राणियों के लिए महत्व, जल की गुणवत्ता तथा उसके संरक्षण के लिए बहुत अधिक बल दिया गया है। वेदों में जल को औषधीय गुणयुक्त कहा गया है। चरक संहिता में आचार्य चरक ने भी भूजल की गुणवत्ता पर चर्चा की है।

प्राचीन भारतीय संस्कृति में माना गया है कि ब्रह्मण्ड में जितने भी प्रकार का जल है उसका हमें सरंक्षण करना चाहिए। नदियों के जल को सर्वाधिक संरक्षणीय माना गया है क्योंकि वे कृषि क्षेत्रों को सींचती है जिससे प्राणिमात्र का जीवन चलता है। नदियों का बहता जल शुद्ध माना गया है। इसलिए नदियों को प्रदुषित नहीं करना चाहिए।

अथर्ववेद में सप्तसैन्धव नदियों का उल्लेख मिलता है। ये सात नदियां निम्न है–

1- सिन्धु नदी 2- विपाशा (व्यास) नदी 3- शतुद्रि (सतलज) नदी 4- वितस्ता (झेलम) नदी

5- असिक्की (चेन्नब) नदी 6- सरस्वती नदी

ऋग्वेद में इन नदियों को माता के समान सम्मान दिया गया है–

ता अस्मश्यं पमसा पिन्वमाना शिवादेवीरशिवद।

भवन्त सर्वा नधः अशिमिहा भवन्तु।[14]

नदियां जल का वहन करती हुई, सभी प्राणिमात्र को तृप्त करती हैं। भोजनादि प्रदान करती हैं। आनन्द को बढ़ाने वाली में तथा अन्नादि वनस्पति से प्रेम करने वाली हैं।

जल संरक्षण पर बल देते हुए ऋग्वेद में कहा गया है कि जल हमारी माता जैसे है। जल घृत के समान हमें शक्तिशाली और उत्तम बनाये। इस तरह के जल जिस रूप में जहां कहीं भी हो वे रक्षा करने योग्य हैं–

"आपो अस्मान्मातरः शुन्धयन्तु घृतेन ना द्युत्वः पुनन्तु।"[15]

जल संरक्षण के लिए वेदों में वर्षा जल तथा बहते हुए जल के विषय में कहा है कि हे मनुष्य! वर्षा जल तथा अन्य स्रोतों से निकलने वाला जल जैसे कुएं, बावडियां आदि तथा फैले हुए जल तालाब के जल में बहुत पोषण होता है।

➢ निष्कर्ष :–

आज विश्व पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है, उससे कर्म में असन्तुलन उपस्थित हो गया है। इससे बचने के लिए वेद–प्रतिपादित सात्त्विक भाव अपनाना पड़ेगा। पर्यावरण को स्वच्छ सुन्दर रखने का आग्रह सिर्फ भावनात्मक स्तर पर किया गया हो, ऐसी बात नहीं है। वैज्ञानिक अनुसन्धान के सन्दर्भ में भी सात्विकता की भावना से अनुप्राणित होकर गहरे मानवीय सम्बन्ध की स्थापना पर पर्याप्त बल दिया गया है। वेद का स्पष्ट निर्देश है कि लोग प्रकृति के प्रति सदा पूर्ण श्रद्धा रखी और आनन्दमय जीवन व्यतीत करने के निमित्त उससे पर्यावरण की अनुकूलता प्राप्त करते रहे। शुक्ल यजुर्वेद का शाश्वत सन्देश है पवन मधुर, सरस व शुद्ध तथा गतिशील रहे. सागर मधुर वर्षण करें। ओज प्रदान करने वाली अन्नादि वस्तुएँ भोजन के बाद मधु के समान सुकोमल बन जाएँ। रात के साथ–साथ दिन भी मधुर रहे। पृथ्वी की धूल से लेकर अन्तरिक्ष तक मधुर हो। न केवल जीवित मनुष्यों का, अपितु पितरों का जीवन भी मधुमय रहे। सूर्य मधुमय रहे. गाये मधुर दूध देने वाली हौं। निखिल ब्रहमाण्ड मधुमय रहे। यह श्लोक प्रकृति की सुंदरता और सामरस्य को बयान करता है और सभी प्राणियों के जीवन में मधुरता, प्रेम और सम्पूर्णता की आवश्यकता को संकेत करता है। यह हमें प्रकृति के संरक्षण, सजीवता की एकता और प्रेम के महत्त्व को समझने के लिए प्रेरित करता है।

➢ संदर्भ सूची

- अथर्ववेद (12-1-35)
- ऋग्वेद (10-9-3)
- ऋग्वेद (1-90-6–8)
- जोशी. वीरेंद्र कुमार, वैदिक साहित्य मे पर्यावरण प्रबंधन, आईएसएसएन . 2319–7722
- सिंह. राजवीर. वैदो मे पर्यावरण चेतन. राजभाषा ज्योतिष
- पूर्वोक्त पुष्ट . 02
- जोशी. वीरेंद्र कुमार, वैदिक साहित्य मे पर्यावरण प्रबंधन, आईएसएसएन . 2319–7722
- अथर्ववेद 12-1-12
- मत्स्य पुराण . 154य512

- ऋग्वेद . 10 / 137 / 3
- वाजपेयी. दीप्ति. संस्कृत साहित्य मे पर्यावरण संरक्षण, पैराडाइज पब्लिशर. जयपुर 2011- 115
- ऋग्वेद . 6 / 28
- ऋग्वेद . 7 / 11
- अथर्ववेद . 12 / 1 / 35
- यजुर्वेद 13 / 18
- ऋग्वेद 7 / 50 / 4
- ऋग्वेद 10 / 17 / 10
- यादव. दयाशंकर सिंह. भारतीय वेद और पर्यावरण संरक्षण. 30 जून 2023